ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/9510 डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal

प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 25, अंक 237 जुलाई 2023

तस्मै श्री गुरुवे नमः

संपादक – डॉ. तारा परमार

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

वर्ष : 25 अंक 237
जुलाई 2023

आश्वस्त

(सन् 1983 से निरंतर प्रकाशित)

RNI No.: MPHIN/2002/9510
ISSN : 2456-8856

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन (पंजीयन क्रमांक 2327 दिनांक 13/05/1999) की मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक
सेवाराम खाण्डेगर
11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श
आयु. सूरज डामोर IAS
पूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक
डॉ. तारा परमार
9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :
डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली
डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात
डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात
डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.

Peer Review Committee
डॉ. श्रवणकुमार मेघ, जोधपुर(राजस्थान)
प्रो. दत्तात्रय मुरुमकर, मुंबई (महाराष्ट्र)
प्रो. रहिम श्रीवास्तव, उज्जैन (म.प्र.)
डॉ. बी.ए.सावंत, सांगली (महाराष्ट्र)

कानूनी सलाहकार
श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	अपनी बात	डॉ. तारा परमार	03
2.	Marginalization of Women and Their Struggle for Identiry in Anita Nair's Novel Ladies' Coupe	Shobha Banshiwal	04
3.	भगवान अटलानी के उपन्यास, 'अपनी-अपनी मरीचिका' में विभाजन की त्रासदी	पूनम भण्डरी	11
4.	Association Between Strength and Tennis Performance among mens tennis Players	Mr. Rahul Yadav Dr. Y.S. Rajpoot	14
5.	राजस्थान की जनजातियों में राजनीतिक चेतना का अभ्युदय	डॉ. अनुपम चतुर्वेदी	19
6.	वर्तमान में आंबेडकर दर्शन की प्रासंगिकता	डॉ. नेत्रा रावणकर (प्राचार्य)	21
7.	वंचित, उपेक्षित व हाशिए के समुदायों के विकास के मुद्दे और भारतीय मीड़िया	डॉ. आसीन खाँ एवं डॉ. अनिल कुमार यादव	24

UGC Care Listed Journal
खाते का नाम - आश्वस्त (Ashwast)
खाते का नं.- 63040357829
बैंक - भारतीय स्टेट बैंक,
शाखा- फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)
IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.com
E-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

एक प्रति का मूल्य	:	रुपये 20/-
वार्षिक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 200/-
आजीवन सदस्यता शुल्क	:	रुपये 2,000/-
संरक्षक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 20,000/-

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेंगा।

अपनी बात

''केवल वही व्यक्ति शिक्षित है जो सीखना और बदलना सीखता है।'' कार्ल रोजर्स।

शिक्षा किसी भी सभ्यता के अस्तित्व या आनेवाली सभ्यता का सबसे पोषित लक्ष्य है।

वर्तमान समय में विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के साथ ही एक बेहतर और सुरक्षित काम (नौकरी) की चाह रखते हैं, क्योंकि वर्तमान में बेरोजगारी की समस्या विकसित एवं अल्प विकसित दोनों तरह की अर्थ व्यवस्थाओं की प्रमुख समस्या बनती जा रही है। यह समस्या आधुनिक समय में युवा वर्ग के लिये घोर निराशा का कारण बनी हुई है। ताजा आँकड़ों के अनुसार देश की बड़ी युवा आबादी रोजगार की तलाश में है। सबसे बड़ी चिंता की बात यह है कि इसमें पढ़े–लिखे युवाओं की संख्या ही सबसे अधिक है। बेरोजगारों में 25 प्रतिशत 20 से 24 वर्ष आयु वर्ग के हैं, जबकि 25 से 29 वर्ष की आयु वाले युवकों की संख्या 17 प्रतिशत है। विशेषज्ञों की माने तो लगातार बढ़ता बेरोजगारी का यह आंकड़ा सरकार के लिये गहरी चिंता का विषय है। वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर केन्द्र सरकार की ओर से हाल में जारी इन आंकड़ों में महिला बेरोजगारी का पहलू भी सामने आया है। नौकरी की तलाश करने वालों मं बड़ी संख्या में महिलाएं भी सम्मिलित है। स्पष्ट है कि बेरोजगारी किस प्रकार व्याप्त है।

दूसरे पहलू की बात करें तो आज की परिस्थिति में शिक्षा अब स्वयं में एक उत्पाद बन गई है, जो कि मानव–संसाधन विकास के लिये अनिवार्य है। विशेषकर तकनीकी क्रांति के बाद इसकी संभावनाएं और भी बढ़ गई है। संचार, इलेक्ट्रानिक, कम्प्यूटर और अब आर्टिफिशियल इंटलीजेंट आदि क्षेत्रों में हुए तकनीकी विकास के लिए एक सुशिक्षित एवं प्रभावी रूप से प्रशिक्षित मानव–संसाधन की आवश्यकता है। उत्पादकता बढ़ाने के लिए तीन बातें महत्वपूर्ण है–शिक्षा, रोजगार संबंधी योग्यता और रोजगार। इस संबंध में हमारी पिछली नीतियों का प्रारूप किसी चीज की ओर भागने के बजाय किसी चीज से भागने की तरह रहा है। कारण जो भी हो।

''सही शिक्षा से ही स्वर्णिम भविष्य संभव होगा'' इस ध्येय वाक्य के संदर्भ में यदि बात करें तो 1966 में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग ने 1986 तक सकल राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत प्रति वर्ष शिक्षा पर व्यय करने की सिफारिश की थी, परंतु सकल राष्ट्रीय आय में वास्तविक विकास दर पर 1965–66 से 1985–86 तक मात्र 3.97 प्रतिशत प्रतिवर्ष की सीमा ही छू सकी। इस वर्ष 2023 के बजट पर केन्द्रीय शिक्षा मंत्री ने ट्वीट किया था कि अभी तक का शिक्षा के मद में यह सबसे बड़ा व्यय होगा, जो भारत को 'ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था' बनाएगा। नई शिक्षा नीति 2020 में इस व्यय को सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 6 प्रतिशत करने का भी वादा था, लेकिन पिछले चार वर्षों से शिक्षा पर केवल 2.9 प्रतिशत खर्च हो रहा है जो सन् 2013–14 में 3.10 प्रतिशत था। राशि में अब तक की सबसे बड़ी वृद्धि इसलिये अहम नहीं है क्योंकि पिछले सात दशक से प्रतिवर्ष जीडीपी हो या बजट यह राशि बढ़ती ही है। सच यह है कि प्रतिशत के रूप में भी पिछले कुछ वर्षों में कुल व्यय में शिक्षा पर खर्च घटता रहा है। किसी भी समाज के आर्थिक विकास के दो मूल आधार होते हैं – स्वास्थ्य और शिक्षा। स्वास्थ्य के पैरा मीटरर्स पर स्वयं सरकार मानती है कि गरीबों की जेब से भी स्वास्थ्य के मद में पहले से ज्यादा खर्च हो रहा है और एनएफएचएस–5 (राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण–5) भी कहता है कि 90 प्रतिशत बच्चे पोषक तत्वों की न्यूनतम स्वीकार्य सीमा से नीचे है। उच्च शिक्षा में एनरोलमेंट तो वर्ष 2013–14 के 24.3 प्रतिशत के मुकाबले 2020–21 में 27.3 प्रतिशत (सरकार के सबसे ताजे आंकड़े) बढ़ा है, लेकिन प्रश्न उठता है कि क्या यह रीति–नीति और गति ठीक है ? और क्या जो शिक्षा दी जा रही है और दी जाएगी वह ए.आर. के दौर में तार्किक वैज्ञानिक सोच विकसित करने तथा मानवीय मूल्यों को विकसित करने में सहायक है ?

– डॉ. तारा परमार

Marginalization of Women and their Struggle for Identity in Anita Nair's Novel Ladies' Coupe

- Shobha Banshiwal

Abstract :-

Anita Nair is one of the new emerging novelists in the post-colonial India. She has presented the Indian society and women's position in it through her novels. Her novel, Ladies' Coupe presents the stories of marginalization and struggle for identity of six women characters Akhila, Janaki Prabhakar, Prabha Devi, Margaret Shanthi, Sheela and Marikolanthu. Akhila, the protagonist of the novel was a forty year old spinster. She listened to the stories of other five women and took her own decision about her life. She had been wondering since long whether a woman should stay single or she should get married. But eventually she realised that she had sacrificed her life for her family who never thought about her desires and dreams. Finally she decided to live for herself and to marry Hari, the person whom she loved.

Key words :- Marginalization, patriarchal domination, assertion, struggle and identity.

Introduction :

Anita Nair is an eminent Indian woman writer writing in English. She was born in the Indian state of Kerala. She has written novels, short stories and poems too. She has worked as the director of an advertising agency also. Her novels Better Man and Ladies' Coupe are the bestselling novels. Through her novels, Anita Nair presents the real state of women in the patriarchal society of post-colonial India. Through this novel she raises her voice against the oppression of women in patriarchal Indian society. In Ladies' Coupe, six women - Akhila, Janaki, Prabha Devi, Margaret Shanti, Sheela and Marikolanthu travel to their destinations. The coupe is a reserved compartment for women in the Indian Railways. In this compartment, these women share the stories of their subjugation, alienation, suffering and their eventual struggle and achievement of their identity.

Akhila or Akhilandeswari was a forty-five year old spinster. When she

was young, her father who was a clerk, died in a road accident. After her father's death, Akhila became the head of the family in the sense that she became responsible for taking care of her family. After getting education, she became a clerk. She took care of her younger brothers and sister Narasi, Narain and Padama respectively and took care of their education too. When her siblings grew up, they wanted to get married instead of thinking about Akhila and her marriage as she was the eldest of them. For them Akhila was not a woman with dreams and desires. For them she was only the breadwinner and family head whose duty was to fulfil their needs. Akhila waited for someone in the family to broach the topic of her marriage but no one did. Akhila saved money for Padama's dowry. Then she got married her brothers and sister. After their marriage, Akhila was left alone with her mother. After her mother's death, she decided to live by herself in her new office quarter but her sister, Padma didn't let her live alone. She tried to fulfil her own selfish motives as her husband did not earn much. Padma decided to live with Akhila in her new quarter with her two daughters and her husband, Murthy who used to come on Saturdays and Sundays. Even though Akhila had done her duties towards her siblings by educating them and by getting them married still they did not want her to live her life. Once in a heated argument

Akhila said to Padma :

For twenty-six years I gave all of myself to this family. I asked for nothing in return. And now when I wish to make a life of my own, do any one of you come forward and say - It's time you did this, Akka. You deserve to have a life of your own. Instead you worry about what it will do to your individual lives. (206, Ladies' Coupe)

She further asked :

Has any one of you ever asked me what my desires were or what my dreams are? Did any one of you ever think of me as a woman? Someone who has needs and longings just like you do? (206, Ladies' Coupe)

Her sister Padma tried to extract more and more from Akhila. Akhila's siblings stopped calling her by her name. For them she was only Akka, the elder sister and expected from her more. When Akhila decided to go on a solo trip to enjoy her own company on

the pretext that she was going on a business trip, her sister became suspicious and asked her a lot of questions. She asked Akhila to take permission from her brothers. But Akhila who was the eldest of them, did not believe that she need anyone's permission to do what she wanted to do. She had completed her duties towards her siblings and now wanted to live her life in her own way.

On her way to Kanyakumari, Akhila met five women who were her fellow passengers in the ladies' coupe. Akhila was wondering whether a single life was better than marriage. These women shared with Akhila their own stories of suffering, exploitation and eventual revolt against injustices inflicted on them. Janaki Prabhakar, the elderly woman believed in the constitution of marriage. She prioritized the security which a woman gets in her marriage. She had always lived as a pampered housewife. She knew that she had the protection of her father before her marriage and after her marriage, she had the protection of her husband and after her husband's death, her son would take the responsibility of her. Although she led the life of a contented housewife yet eventually she felt that her husband had always tried to control her and her son. She had some dissatisfaction in her heart but she never raised her voice to address it.

Margaret Shanthi was another woman in the novel. She was a chemistry lecturer in a school. She was married to Ebenezer Paulraj, the principal of the school. Ebenezer was too strict and hard hearted. He had no tender feelings and respect for his wife. He always wanted her to obey him. He wanted everything to be perfect. He always tried to make Margaret feel that he was superior to her. He was cruel towards his students too. He punished them severely even at little mistakes. He had love affairs with other female teachers in the school. In the beginning of his married life, he forced Margaret to abort her child due to which she couldn't conceive again for many years. Margaret wanted to do Ph. D. but her husband forced her to do B. Ed. and become a teacher. He destroyed every joy and wish of Margaret. He always criticized her for everything. Although she too was a lecturer in the same school but he used to show that he was more skilful, superior and talented than her and used to show that he was respected by others. In the patriarchal

families and society, men consider themselves superior to women and they expect women too to feel themselves inferior to them. Chimamanda Ngozi Adichie writes in her book We Should All be Feminists:

And then we do a much greater disservice to girls, because we raise them to cater to the fragile egos of males.

We teach girls to shrink themselves, to make themselves smaller.

We say to girls, 'You can have ambition, but not too much. You should aim to be successful but not too successful, otherwise you will threaten the man. If you are the breadwinner in your relationship with a man, pretend that you are not, especially in public otherwise you will emasculate him.' (27-28)

Ebenezer was fond of his figure. He used to make excessive efforts to look smart. He used to do exercise regularly to keep his body fit. Margaret decided to take a revenge on Ebenezer for his cruelty and patriarchal domination. She started to prepare delicious food for him to make him fat. By doing so she wanted to pull down his ego, arrogance and his self-esteem. Sooner he became a fat man. She ignited his sexual desires for her. She conceived again and she decided to keep Ebenezer in her control by over-feeding him with delicious food. Thus eventually, she got her power and her rights by taking revenge on her egoistic husband.

Prabha Devi, another woman in the novel was not wanted by her father. At her birth, her father said to her mother: "Has this baby, apart from ruining my business plans, addled your brains as well? If you ask me, a daughter is a bloody nuisance." (169, Ladies' Coupe) This attitude of Prabha Devi's father shows the gender-discrimination which is widespread in the society but for Prabha Devi, her daughter was too valuable. Anita Nair writes:

This one daughter of hers gave her more pleasure than all her four sons put together. But she kept quiet about it. Long ago she had discovered that a woman with an opinion was treated like a bad smell. To be shunned. And so Prabha Devi's mother swallowed the thought as she had done all her life. (170, Ladies' Coupe)

Prabha Devi took great care of her daughter as if she were a princess. When Prabha Devi grew up she was

married to Jagdeesh, the son of a rich diamond merchant of Banglore. Prabha Devi led a happy and contented life in the joint family of her married home. With her husband she also went to New York where influenced by white women's confidence, freedom and living style, she too changed herself as a modern and confident woman. Unknowingly, she started to influence Pramod, her husband's friend who eventually tried to take advantage of her. Due to Pramod's advances towards her, Prabha Devi became afraid of being abandoned by her husband for being disloyal to him. Frightened she decided to be a submissive and obedient housewife to her husband and leave all of her efforts to appear a fashionable and smart woman. After coming to India, she devoted her life to her family, husband and children. At the age of forty, she realised that she had abandoned all of her desires, freedom and aspirations. She had always wanted to learn swimming. So she enrolled herself and started to learn swimming without telling her husband about it and live her life again.

Sheela, the youngest of the six women was sexually harassed by her friend, Hasina's father who had bad intentions towards Sheela. Once he wiped the sweat beads over her mouth. Another time, he tied the knot of the laces on her sleeve even when his wife and daughter were beside him. Sheela's grandmother whom Sheela called Ammumma, was a bold woman. She told Sheela that she should make efforts to look beautiful not to please others but to please herself. She told her that a woman should not depend on a man for her happiness. Thus Ammumma imparted Sheela the values to make her a strong woman.

Marikolanthu, the last woman in the group, belonged to a poor background. She did not know English and as a result she was left alone by other women in the coupe. Akhila at last spoke to her. Marikolanthu told Akhila her story. Marikolanthu's mother used to do domestic chores in the Chettiar house of her village. Marikolanthu had to do all the works at her home. When Chettiar's daughter-in-law, Sujata gave birth to a baby, Marikolanthu was asked to take care of the child and run errands. When Marikolanthu grew as a young woman, all the men in the Chettiar home glanced at her with bad intentions. Later, she was raped by Murugesan, the brother of Rani Akka,

the younger daughter-in-law of Chettiar. Being a woman of lower class, no one believed her accusation on Murugesan. She delivered her illegitimate child in a relative's home. Marikolanthu had only hatred for the child, Muthu whom she did not accept till Murugesan died. In Chettiar's home, Sujata led lonely life as her husband, Sridhar was involved in another women and remained busy in his business and had no time for Sujata. Sujata had frustrated desires which she satisfied in her lesbian relationship with Marikolanthu who tried to please Sujata in whatever way she could. Sridhar used to have physical relation with Marikolanthu at nights out of his wife's knowledge. When Sujata came to know about this, she threw Marikolanthu out of the home. Marikolanthu's mother had already died. Her brothers did not want her in their home. They wanted Marikolanthu to take away her child with her. So she mortgaged Muthu for the money which she needed to abort her child by Sridhar. After Murugesan's death, she felt pity for the child, Muthu who was kept in the graveyard to rekindle the half burnt corpse of Murugesan. With the cremation of Murugeson, all of her hatred for Muthu too burnt away. She decided to accept Muthu as her son and take care of him. She finally decided to get some job at Missy K.'s home and live independently.

Thus Anita Nair has depicted the marginalization of women. All the six women in the coupe were marginalized in their patriarchal families and in the society. Akhila was not allowed by her family to live her life even when she had devoted most of her life for the welfare of her family. Margaret Shanthi suffered under the male domination of her husband. Prabha Devi abandoned her desires and wishes to be a submissive wife for her husband. But at the age of forty, she revived her boldness and joyous personality by fulfilling her desires and her own aspirations. Although Janaki lived a happy, contented and secured life outwardly but in her heart she felt that she was only a doll for her husband. She remained subservient to her husband and her son who controlled everything. Later, she realised her subservient position in her family and felt discontented. Sheela was abused by her friend's father. She decided to never go to her friend's home again. Marikolanthu was marginalized and abused by her family as well as the

society. Her mother burdened her with the duties of taking care of the home. Later Marikolanthu was raped by Murugesan and was sexually abused by Sridhar. She was abandoned even by her brothers who expelled her from the property rights. But she struggled for herself and eventually accepted Muthu as her son and achieved her identity as an independent woman and as a mother. Sharmila, the friend of Prabha Devi whom Prabha Devi met in the plane, was dominated by her mother-in-law. Sharmila appeared to her as a miserable person who had to take care of her child as well as her mother-in-law's strict rules and regulations.

The women in this novel suffer a lot due to the patriarchal set up of the society but eventually they assert themselves and carve out a space and identity for themselves. Akhila eventually decided to marry Hari whom she loved. Prabha Devi decided to learn swimming and fulfil her suppressed desires. Sheela learnt from her grandmother to be an independent and happy woman. Marikolanthu suffered a lot. Throughout the novel she tried to escape from her past and from her responsibility of accepting her own son, Muthu but eventually she accepted him and achieved her identity as a mother and as a woman who was real to herself. Thus this paper presents the patriarchal domination, male ego and gender-discrimination which make women's lives miserable. Women should be aware of their rights and they should stand for themselves. Chimamanda Ngozi Adichie too writes that men and women should be raised with the ideas of equality between men and women so that a happy and fair world may be created. She writes :

Gender matters everywhere in the world. And I would like today to ask that we should begin to dream about and plan for a different world. A fairer world. A world of happier men and happier women who are truer to themselves. And this is how to start. We must raise our daughters differently. We must also raise our sons differently. (25, We Should All Be feminist)

- Shobha Banshiwal
Assistant Professor (English)
S. D. Govt. College, Beawar (Ajmer)
Mob. No. 8306094701

Works Cited:

Nair, Anita. Ladies' Coupe. Penguin Books. 2015.

Adichie, Chimamanda Ngozi. We Should All Be Feminists. Fourth Estate: London, 2014.

भगवान अटलानी के उपन्यास 'अपनी–अपनी मरीचिका' में विभाजन की त्रासदी

– पूनम भण्डारी

शोध सारांश

भगवान अटलानी का उपन्यास 'अपनी–अपनी मरीचिका' भारत–पाक विभाजन की पृष्ठभूमि में रचित उपन्यास, जिसमें विस्थापन की समस्या शरणार्थियों के विभिन्न सामाजिक, आर्थिक व स्थायी निवास की समस्याओं को दर्शाया गया है । अभावों के बीच किस प्रकार आये दिन शरणार्थी जीवन संघर्ष करते हुए विषम परिस्थितियों से जूझते हुए जीने को अभिशप्त है, किस प्रकार युद्ध विभाजन से आम जनता का जीवन नारकीय बनता है यह इस उपन्यास में वर्णित है। विभाजन के समय हिन्दू–मुसलमान दोनों सम्प्रदाय के लोग साम्प्रदायिक विद्वेष, पारस्परिक घृणा और धर्मान्धता से पागल हो गए थे। इस दौर में अधिकांश लोग न तो मानवीय सम्बंधो के प्रति ईमानदार रह सके और न ही कोई मानवीय मूल्यों को सुरक्षित रख सके।

अपनी सीमाओं व सम्भावनाओं के बीच लिखा यह उपन्यास अपने–आप में पूर्णतः सार्थक विषय वस्तु का जिस सूक्ष्म रूप में वर्णन किया गया है वह प्रशंसनीय है।

संकेत बिन्दु – मरीचिका, पृष्ठभूमि, विस्थापन, शरणार्थी, विभिन्न, दर्शाया, संघर्ष, परिस्थितियाँ, अभिशप्त, नारकीय, सम्प्रदाय, धर्मान्धता।

भारत विभाजन की पृष्ठभूमि – मानव सभ्यता का विकास युद्ध और नरसंहार की नींव पर हुआ है । मनुष्य की महत्वाकांक्षा रक्त सिक्त होकर उद्दाम रूप धारण करती है । किन्तु भारत भूमि का बँटवारा अखण्ड आर्यावर्त का विभाजन भारतीय इतिहास की एक अभूतपूर्व घटना थी ।

विभाजन और हिन्दी उपन्यास–विभाजन के कारण विभाजन के बाद मानवीय सम्बंधो में जो दरार, उलझन और विरोधाभास उत्पन्न हुए, जो नयी तरह की ग्रन्थियाँ और विकृतियाँ निर्मित हुई उन्हें उपन्यासकारों ने कथा साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्ति दी । विभाजन की त्रासदी से उत्पन्न दुःख अपना देश छोड़ने की विवशता, असहाय शरणार्थियों की व्यथा, अपहृत स्त्रीयों की वेदना तथा उनकी समस्याओं एवं विभाजन से जुड़ी मनुष्य की क्रूर मानसिकता के उद्घाटन के साथ–साथ इन सब की जिम्मेदार अवसरवादी राजनीति के प्रति आक्रोश के स्वर मुखरित हुए हैं। अनुभूतियाँ एक दिन में या एक वर्ष में नहीं उभरती लेखक अनिवार्य रूप से अपने परिवेश से प्रभावित होता है। 'जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असम्भव हो जाता है और उसकी विशाल आत्मा अपने देश बंधुओ के कष्टों से विकल हो उठती है और इस तीव्र विकलता में वह रो उठता है और उसके रूदन में भी व्यापकता होती है वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौमिक होता है।'[1]

स्वभावगतः हिन्दी के उपन्यासकारों को इस विषय ने आकृष्ट किया भगवान अटलानी जिनके लिए भारत विभाजन की त्रासदी उनकी स्वयं अनुभूत निजी त्रासदी थी। राजस्थान साहित्य अकादमी के सर्वोच्च 'मीरा पुरस्कार' से सम्मानित एवं कथा विधा में रांगेय राघव पुरस्कार से पुरुस्कृत भगवान अटलानी धनीभूत मानवीय संवेदनाओं के रचनाकार समादृत हैं। व्यक्ति, समाज और देश की पीड़ा से व्यथित सर्जक की कलम जब चलती है तो वह साहित्य अभिव्यक्ति के रूप में चित्रित होती है। भारत विभाजन के समय अपने माता–पिता के साथ मुंबई के उल्लास नगर में 'कल्याण कैम्प' में शरणार्थी शिविर में शरण लेते हुए 5 वर्ष शरणार्थी के रूप में बिताए इन्होंने विभाजन की विभीषिका को झेला, देखा है माँ–पिता से भारत विभाजन की त्रासदी की कितनी दुश्वर स्मृतियों को

अनुभूत किया उन सभी के अपने–अपने सत्य और सौन्दर्य को सृजन में अभिव्यक्त किया। भगवान अटलानी का उपन्यास 'अपनी–अपनी मरीचिका' जो सन् 1993 में प्रकाशित हुआ।

यह उपन्यास सिंध के लोगो का जीवट प्रामाणिक दस्तावेज है। इस उपन्यास के कथानक की बनावट दोहरी है इसमें कबाड़ी की व्यथा और डायरी लेखक की कथा कुछ इस तरह मिलजुल कर चली है कि एकात्म हो गई। शरणार्थी शिविरों में भावों अभावों के बीच जूझते हुए नायक के चरित्र का ग्राफ संघर्ष और आत्मविश्वास उत्तरोत्तर विकसित होता है। पाकिस्तान निर्माण के बाद सिंधी समाज का जुझारू और परिश्रमी चरित्र लेखक ने बहुत ईमानदारी और बिना संकोच एवं लाग लपेट के प्रस्तुत किया है– केवल अपने साहस और जीवन के बल पर इस समाज ने अपनी व्यावसायिक बुद्धि के द्वारा नये सिरे से अपने जीवन की ऊँची इमारतों का निर्माण किया है। उपन्यास का नायक यह जुझारूपन विरासत से पाता है।

'अपनी–अपनी मरीचिका' में कथानक का विस्तार ठीक वैसे ही हुआ जैसे सिंध के विस्थापित बंधुओं का भारत में आने पर हुआ और इस उपन्यास का विकास भी विस्थापित सिंधी समाज का विकास है, जो केवल प्रेस की भाषा और आदर सम्मान का व्यवहार जानते थे। उन सभी सिंधी बंधुओं को भारत आने पर कैसे–कैसे अनुभव हुए और वे कैसे अपनी जीवटता के बल पर एक नये जीवन के कर्णधार बने, इस व्यथा कथा को साहित्य में चिरस्थायी दर्पमय स्थान दिया है भगवान अटलानी ने।

भारत–पाक विभाजन के समय जो त्रासदी दोनों देश के अल्पसंख्यकों ने भोगी थी वह जितनी भयानक थी उससे कहीं ज्यादा उन सवालों, आशंकाओं और प्रतिफलनों से दो चार करने वाली थी जिनके कारण बहुत ऐसे लोगों का देश निष्ठा और ईमानदारी से मोहभंग हुआ जिन्हें सब कुछ दाँव पर लगाकर अपने लोगों से दूर जाना पड़ा जिन निष्ठावान देशभक्तों ने जिस स्वतंत्र देश की कल्पना की थी वह एक 'मरीचिका' ही साबित हुई, खासकर उन सिंधियों के लिए जो अपनत्व की भावना लिए दूसरे देश में शरणार्थियों के रूप में बरसों इधर से उधर भटकते रहे। जिस विभीषिका को और जिन अभावों को उन्होंने देखा और भुगता है उसके चलते उपन्यास के पात्र बाबा जैसे ईमानदार और निष्ठावान लोगों का आजादी से मोहभंग होना लाजिमी था, क्योंकि जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए 'सत्याग्रह, पर्चेबाजी, पिकेटिंग और विदेशी आततायियों के जुल्म सहे उन्हें स्वतंत्रता के बाद क्या मिला?'[2]

"सिर्फ विभाजन से मिली भिखारी और शरणार्थियों की व्यंग्योक्तियाँ उनकी जवान बहू–बेटियों को खा जाने वाली आँखे कमीशन, घूसखोरी लूटकर अपना घर भरने वाली संस्कृति और नेताओं की नसीहतें।"[3] शरणार्थियों की समस्या देश और समाज के लिए एक नयी समस्या थी। "जिसने राजनीति ही नहीं सम्पूर्ण समाज व्यवस्था को आन्दोलित किया अपना वतन छोड़कर अपने 'देश' में पँहुचे लोगों की आँखो के सामने अंधकार मय भविष्य था, साम्प्रदायिक वहम और जुल्मों ने उनके जीवन को एक अंधे मोड़ पर ला खड़ा किया था।"[4]

शायद इसी कारण बाबा को अपने परिवार के लिए शुरू किये जाने वाले काम के लिए वह सब करना पड़ा जो उस निष्ठावान देशभक्त और ईमानदार व्यक्ति की फितरत में था ही नहीं यह सब इसलिए करना पड़ा क्योंकि बाबा की अपेक्षा विभाजन की त्रासदी से पैदा हुए जख्मों को सहलाने की थी किन्तु कदम–कदम पर उन्हें देखने को मिली भ्रष्ट संस्कृति जिसमें एक दूसरे का गला काटकर अपना पेट भरने की आतुरता कहीं अधिक थी। यही आतुरता, यही लोलुपता और गिद्धों की क्षुधातुर चोचें थी जिससे डर और उबकर बाबा को अन्ततः कहना पड़ा –'सिद्धान्त तो इंसान के लिए होते हैं इंसान के कष्टों को जो सिद्धान्त बढ़ाते हैं, उन्हें ढोते चले जाने का क्या फायदा?[5]

आजादी प्राप्त करना किसी भी सेनानी का पहला और अंतिम लक्ष्य नहीं हो सकता। व्यवस्था और सत्ता

की बागडोर विदेशी शासको के हाथों से निकलकर अपने लोगों के हाथों में आए यह तो ठीक है। किंतु क्या इतना ही पर्याप्त है? अपने लोग सत्ता पाकर देशवासियों के लिए क्या करते हैं कितना सोचते हैं, अपने और पराये शासन में अंतर की कसौटी यही हो सकती है। क्या बाबा नहीं समझते होगें कि मिल्कीयत बदलने से मकान में लगे मकड़ी के जाले अपने आप नहीं छूट जाते ? जाले हटाने होते हैं। मकान की सफाई करनी होती है फर्श को धोना पड़ता है । दीवारों पर सफेदी करनी पड़ती है। टूट–फूट ठीक करनी पड़ती है, दरारें पाटनी पड़ती है, झड़ता हुआ पलस्तर दुबारा कराना पड़ता है।'[6]

रोजी–रोटी की चिंता मे स्वयं लेखक के पिता पच्चीस रू. जेब में लेकर जब शरणार्थी कैम्प से निकलते हैं तब लेखक पूछता है 'बाबा अपरिचित देश, अपरिचित लोग, केवल पच्चीस रूपये में कौन सा धंधा करेंगे आप?'[7] पेट भरने के लिए शरणार्थी किसी भी छोटे बड़े कार्य करके अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संलग्न जिसे जो मिलता वही कार्य करने के लिए निकल पड़ते। "स्वयं डायरी लेखक ने भी दो ब्रश और पॉलिश की दो डिबियाँ खरीदकर कल्याण स्टेशन पर घूम–घूमकर जूतों की पॉलिश करना शुरू कर दिया।'[8]

डायरी लेखक नये परिवेश में अपने को ढालने में पूर्णतया अभ्यस्त, शिविर कार्यालय में भी धीरे–धीरे लेखन कार्य करने में लगा जिसका प्रत्यक्ष व परोक्ष लाभ उसे होता शिविरों में अधिकारियों और कर्मचारियों की हेराफेरी, धाँधली, रिश्वतखोरी, बेईमानी, मिलावट, कतरब्योंत और सुविधाओं को ऊपर–ही–ऊपर से हड़प करने की आदतों का नुकसान उसे नहीं होता। वे लोग लेखक को इसलिए बरदास्त करते थे क्योंकि लेखक नियमित रूप से सुबह–शाम निःशुल्क कर्मचारियों के काम के बोझ को कम करता था ।

"सोना आग से तपकर ही कुंदन बनता है। आग में तपाए बिना सोना विभिन्न आभूषणों के रूप में नयनाभिराम आकार ग्रहण नहीं कर सकता। पाँव टिकाने और साँस लेने की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। आज नहीं तो कल हम वैसाखियाँ छोड़कर अपने बूते पर चलने में कामयाब होगें, जरूर कामयाब होगें।'[9]

उपसंहार –

इस प्रकार भगवान अटलानी के उपन्यास 'अपनी–अपनी मरीचिका' में विभाजन के बाद की वस्तु स्थिति का जीवंत दस्तावेज जिसमें विभाजन के बाद की त्रासदी शरणार्थियों की विभिन्न समस्याओं को स्वयं अनुभूति के आधार पर जीवंत व उत्कृष्ट रूप में उद्धृत किया है।

शोधार्थी
– **पूनम भंडारी**
हिन्दी विभाग
जय नारायण विश्व विद्यालय, जोधपुर (राज.)
मोबा. 9413751711

संदर्भ :

1. प्रेमचंद : हंस, अप्रैल 1932, पृष्ठ 40
2. यशपाल, झूठा सच : वतन और देश, लोक भारती प्रकाशन, पृष्ठ 482
3. अटलानी, भगवान : अपनी–अपनी मरिचिका, ज्ञान गंगा, दिल्ली, पृष्ठ 14
4. अटलानी, भगवानः अपनी–अपनी मरिचिका, ज्ञान गंगा, दिल्ली, पृष्ठ 14
5. यशपाल, झूठा सचरू वतन और देश, लोक भारती प्रकाशन, पृष्ठ 482
6. अटलानी, भगवानः अपनी–अपनी मरिचिका, ज्ञान गंगा, दिल्ली, पृष्ठ 36
7. अटलानी, भगवानः अपनी–अपनी मरिचिका, ज्ञान गंगा, दिल्ली, पृष्ठ 35
8. अटलानी, भगवानः अपनी–अपनी मरिचिका, ज्ञान गंगा, दिल्ली, पृष्ठ 19
9. अटलानी, भगवानः अपनी–अपनी मरिचिका, ज्ञान गंगा, दिल्ली, पृष्ठ 23

ASSOCIATION BETWEEN STRENGTH AND TENNIS PERFORMANCE AMONG MENS TENNIS PLAYERS

- Mr. Rahul yadav
- Dr. Y.S Rajpoot

ABSTRACT

The purpose of the study to determine the association between strength and tennis performance among men tennis players . The sample for the study is twenty (20) and age of students from 17 to 24 years, Measure the hand grip strength by dynamometer and leg strength measured by dynamometer, shoulder strength measured by overhead medicine ball throw and tennis performance check by broer miller tennis test. The result of this study indicates that significant positive correlation of handgrip strength and leg strength with forehand drive and backhand drive among tennis players..

Keywords - Tennis, grip strength, leg strength,shoulder strength and skill test .

INTRODUCTION

Tennis is one of the world's most popular sports. This is a fine game that requires certain abilities, such as strength, speed, endurance, and skill. At the professional level, tennis players can earn fame and money, but as a recreational sport, tennis offers many enthusiasts the chance to take part in satisfying matches and even to play in tournaments. People in this day and age consider that tennis is an excellent sport to maintain good health and to remain physically active (p.babette et.al, 2007). In addition, the sport is a good way to meet new people in a pleasant social setting, as well as a sport that can be played forever, regardless of age (Payne & Rink, 1997).

A measure of muscular strength determines the ability to perform activities requiring high levels of muscular force. It is an important component of assessing health-related fitness (American college of sports

medicine,2014) According to the American Society of Hand Therapists, the elbow should be flexed at 90°.

A grip strength measurement can be conducted quantitatively. In terms of evaluating grip strength, the methods used vary, for instance the type of dynamometer used or the measurement protocol.(h.c roberts et al,2011) Hand grip force represents the force generated by upper limb muscles, as well as the other body muscles (T. rantanen, 1994). There have been numerous studies which show grip strength has several advantages over other biological measurements(JA Windsor, 1988). The hand held dynamometer is not only inexpensive, but also portable, noninvasive, simple to use, non-invasive, and non-technical. technicians. Furthermore, this device has been proven to have both low inter-observer variability and high test-retest reliability (RW bohannan, 2006).

This measurement was performed on a leg dynamometer by Take Physical Fitness Test. The subjects placed their feet on the dynamometer table after warming up for five minutes. Their bodies were slightly leaned forward as they pulled vertically up the dynamometer bar with their legs at maximum rate while their arms were stretched and backs were straight (M. kaya et,al. 2018)

In tennis, if players have a good strength related to arm,shoulder and leg so he or she can easily execute the skill. for example,Arm strength help to hold the racket properly or easily control the racket during the match, shoulder strength also helps when the player wants to generate more power in the service or try push opponent to the backside of the court. leg strength also play vital role in the whole match of tennis because in tennis match student require more power,strength, endurance, flexibility, agility etc.one match of tennis take 3 to 4 hours average so we can say that we need more fitness components.

Broer and Miller (1950)Test has been constructed to measure how well

college players can hit forehand drives and backhand drives from the baseline. Both novice and intermediate tennis level players showed a reliability of 0.80. The test was judged honest by correlating expert rating with performance.

The Purpose Of The Study Was To Association Between Strength And Tennis Performance Among Mens Tennis Players .

METHODOLOGY

For the study we selected twenty males subjects age 20.7±2.21, height 168.9±3.03 and weight 61.2±6.32) from lakshmibai national institute of physical education(LNIPE), Gwalior,India . All the subjects are practicing tennis more than four years and they also participated state level tennis tournaments. study was conducted in L.N.I.P.E. Tennis court for testing the performance ability and for strength it was measured in the biomechanics laboratory of LNIPE ,Gwalior.

Data of the study collected from the tennis court and biomechanics laboratory's. First student tested by dynamometer for the grip strength and leg strength. Medicine ball throw of 3kg to the back side for shoulder strength and skill test tested on tennis court. In grip strength student flexed the arm in 90 degree squeeze the hand and hold the dynamometer for 5 seconds. In leg strength students back should be straight leg knee slightly flexed and pull in upward direction hold for 5 seconds. In skill test, researcher used broer miller tennis skill test, in this test,twenty eight balls feed to the students and students hit the balls from the baseline, first fourteen balls hit forehand drive and second fourteen balls hit backhand drive. Marking area also marked on the tennis court. So the ball drops after hitting forehand and backhand drive the points were given to the students.

A pearson's coorelation was used to determine the association betweeen strength and tennis performance among mens tennis players. A 0.05 level of probability was used to indicate statistical significance.

RESULT

Correlations							
		forehand	legstrength	shoul-der-strength	grip-strengthR	grip-strengthL	backhand
forehand	Pearson Correla-tion	1	.615**	.393	.580**	.627**	.853**
	Sig. (2-tailed)		.004	.087	.007	.003	.000
	N	20	20	20	20	20	20
legstrength	Pearson Correla-tion	.615**	1	.641**	.798**	.790**	.581**
	Sig. (2-tailed)	.004		.002	.000	.000	.007
	N	20	20	20	20	20	20
shoulderstrength	Pearson Correla-tion	.393	.641**	1	.569**	.435	.527*
	Sig. (2-tailed)	.087	.002		.009	.056	.017
	N	20	20	20	20	20	20
gripstrengthR	Pearson Correla-tion	.580**	.798**	.569**	1	.859**	.654**
	Sig. (2-tailed)	.007	.000	.009		.000	.002
	N	20	20	20	20	20	20
gripstrengthL	Pearson Correla-tion	.627**	.790**	.435	.859**	1	.652**
	Sig. (2-tailed)	.003	.000	.056	.000		.002
	N	20	20	20	20	20	20
backhand	Pearson Correla-tion	.853**	.581**	.527*	.654**	.652**	1
	Sig. (2-tailed)	.000	.007	.017	.002	.002	
	N	20	20	20	20	20	20
**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).							

*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

Pearson correlations test was conducted to measure the association between strength and tennis performance among men tennis players. Significant and positive correlation were found between forehand drive and leg strength (r=0.615), grip strength right hand (r=0.580),grip strength left hand (r=0.627.) While there is a significant positive correlation found between backhand drive and leg strength (r=0.581), shoulder strength (r=0.527), grip strength right hand (r=0.654), grip strength left hand (r=0.652).

CONCLUSION

In conclusion, the result of this study indicates the significant positive correlation of handgrip strength with forehand drive and backhand drive among men tennis players. It could be concluded that the leg strength was positively correlated with forehand and backhand drive. This information can be used as guidance for sports specific training to improve forehand drive and backhand drive performance among tennis players.

- Mr. Rahul yadav,
Research scholar, L.N.I.P.E., Gwalior (M.P), India Mob. 9179672879
- Dr. Y.S Rajpoot
Associate professor, L.N.I.P.E., Gwalior (M.P), India

References :

- P. Babette And B. Staal Et, Al(2007) Health Benefits Of Tennis British Journal Of Sports Medicine 41(11) : 760-8.
- Payne g, rink j. (1997) physical education in the developmentally appropriate integrated curriculum. In:c. Hart, d. Burts, and r. Charlesworth (eds.). Integrated curriculum and developmentallyappropriate practice-birth to age eight. Albany, ny: suny press; 1997:145-170.
- Zetou E, Koronas V, Athanailidis I, Koussis P(2012). Learning tennis skill through game Play and Stay inelementary pupils. J. Hum. Sport Exerc. Vol. 7, No. 2, pp. 560- 572.
- H.C Roberts Et Al(2011), A Review Of The Measurement Of Grip Strengthin Clinical And Epidemiological Studies: Towardsa Standardised Approach, Age And Ageing 40(4):423-9
- Rantanen T, Era P, Heikkinen E(1994). Maximal isometric strength and mobility among 75-year-old men and women. Age Ageing; 23(2): 32-7
- Windsor JA, Hill GL(1988). Grip strength: a measure of the proportion of protein loss insurgical patients. Br J Surg; 75(9):880-2
- M.kaya et,al (2018) The effect of the leg and back strength of the serve and tennis players to the serve throwing speed and agility,physical education of students [accessed Jun 10 2022].
- Bohannon RW(2006). Test-retest reliability of the MicroFET 4 hand-grip dynamometer.Physiother Theory Pract; 22(4): 219-21
- American College of Sports Medicine,(2014). ACSM's HealthRelated Physical Fitness Assessment Manual, Fourth Edition. Kaminsky L, editor. USA: Lippincott Williams and Wilkins.
- Fess E, Moran C(1981). Clinical Assessment Recommendations. USA: American So- ciety of Hand Therapists.
- Marion R. Broer & Donna Mae Miller (1950) Achievement Tests for Beginning and Intermediate Tennis, Research Quarterly. American Association for Health, Physical Education and Recreation, 21:3, 303-321

राजस्थान की जनजातियों में राजनीतिक चेतना का अभ्युदय

– डॉ. अनुपम चतुर्वेदी

जनजाति शब्द हिन्दी में ट्राइब्स के समानार्थक रूप से प्रयुक्त होता है। ट्राइब्स शब्द हिन्दी में साधारणतया 'कबीले' के संदर्भ में अनुवाद होता है। अतः 'कबीला' ट्राइब्स, जनजाति आदि का प्रयोग भारत में प्रायः पर्यायवाची के रूप में किया जाता है। वन से गहरे जुड़े होने के कारण इन्हें वनवासी भी कहा जाता है। लोक प्रचलन में सर्वाधिक प्रयुक्त शब्द 'आदिवासी' है जो मूल निवासी होने का घोतक है। पाश्चात्य देशों में ट्राइब्स को क्लान, किन, किनसिप ग्रुप, फोक के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है। इन सब शब्दों में हम संविधान द्वारा प्रदत्त शब्द 'जनजाति' का ही प्रस्तुत शोध पत्र में प्रयोग करेंगे।

सामान्य रूप से जनजाति ऐसा समुदाय है जो समान पूर्वज परम्परा, रक्त संबंध, समान संस्कृति, समान भाषा का प्रयोग करता है। ये जनजाति समूह प्रायः अर्द्ध स्वायत्त होते है। इनके अलग नियम और कायदे होते है तथा इनमें स्पष्ट सांस्कृतिक पार्थक्य होता है। वास्तव में इनकी स्थिति राष्ट्र के भीतर आश्रित राष्ट्र के समान होती है। जनजाति में निम्नलिखित सामान्य लक्षण पाए जाते है :–

(1) आदिम लक्षण (2) भौगोलिक अलगाव (3) विभेदित संस्कृति (4) आर्थिक पिछड़ापन (5) दूसरे समुदाय से कम सम्पर्क की प्रवृत्ति

संविधान के अनुच्छेद 366 (25) के अनुसार अनुसूचित जनजाति वह समुदाय है जो संविधान के अनुच्छेद 342 के अनुसार अनुसूचित जनजाति संवर्ग की सूची में सम्मिलित किया गया है।

राजस्थान के मानचित्र में यदि हम वनों का क्षेत्र देखे तो पाऐंगे कि जनजाति वर्ग की जनसंख्या वनों की सघनता के अनुक्रमानुपाती है। जंगल बढ़ने के साथ जनजातियों की जनसंख्या भी बढ़ती दिखती है। उत्तरी पश्चिमी राजस्थान और राजस्थान में वनों का प्रतिशत कम होने से यहां जनजाति वर्ग की जनसंख्या भी विरल है। इस तथ्य के प्रेक्षण से हम यह भी जान जाते है कि जनजातियां वनों से कितनी गहरी जुड़ी है, कदाचित इसलिए ही इन्हें वनवासी की संज्ञा से भी अभिहित किया जाता है। राजस्थान की जनजातियों में सर्वाधिक संख्या भील जनजाति की है उसके बाद मीणा जनजाति की तथा अन्य जनजातियां गौण रूप से एक–दो जिलों में ही पायी जाती है। भीलों का संकेन्द्रण दक्षिण राजस्थान और मीणाओं का संकेन्द्रण दक्षिण–पूर्व राजस्थान में अधिक है। डामोर जनजाति मुख्यतः डूंगरपुर, गरासिया सिरोही में, कथौडी उदयपुर में, सहरिया बांरा में, सांसी अजमेर एवं भरतपुर में तथा कंजर, हाडौती प्रदेश में मुख्यतः पायी जाती है। इनके अलावा नायक, कोली, धानका इत्यादि अन्य जनजातियां है। सहरिया जनजाति को सबसे भेद जनजातिय समूह (पीवीटीजी) में रखा गया है।

जनजाति समूह में पार्थक्य का भाव एवं सांस्कृतिक चेतना हमेशा विद्यमान रहती है। जनजातिय समुदाय अपने रहने के तौर–तरीकों, रीति–रिवाजों में किसी भी प्रकार के बाहरी दखल का विरोध करते है । यह समुदाय जल, जंगल, जमीन पर अपने को दावेदार मानते है । किन्ही बाह्य लोगों के कानून बनाकर इनकी दावेदारी पर सवाल उठाने को ये लोग पूर्णतया अनुचित मानते हुए बाह्य कानूनों को खारिज करते है।

राजे–रजवाड़ों के समय में इनकी इस स्थिति का सम्मान किया गया था। प्रायः इनके क्रियाकलाप एवं क्षेत्र में अनुचित हस्तक्षेप नहीं किया जाता था । अंगेजों के आगमन के बाद इस स्थिति में परिवर्तन आया। 'अंग्रेज' इन्हें अलाभकारी समूह मानते थे। अंग्रेजों ने इनके क्षेत्र में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया जिससे इनकी पार्थक्यकारी सांस्कृतिक चेतना सुलगने लगी और जनजाति समुदाय का अंग्रेजों और अंग्रेजों के सहायक भारतीय राजे, रजवाड़ों से संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इस संघर्ष से उनमें नव–राजनीतिक चेतना का प्रस्फुटन हुआ ।

पूर्ववर्ती शताब्दियों में जनजाति वर्ग के स्वयं के

राज्य भी रह चुके थे। भीलों के छोटे–छोटे स्वायत्त क्षेत्र थे। मेवाड़ की सेना में भी भीलों की सैन्य टुकड़ी कार्यरत् रहती थी। मेवाड़ के कुछ सिक्कों में एक तरफ राजपूत सैनिकों की तो दूसरी तरफ भीलों (सैनिकों) की आकृति खुदी रहती थी ।

11वीं शताब्दी के मध्य तक मीणा जनजाति ढूंढाड प्रदेश पर राज करती थी। 14वीं शताब्दी के मध्य तक मीणा बूंदी पर राज्य करते थे लेकिन परवर्ती शताब्दियों में मीणा, भील एवं अन्य जनजातियों की राजनीतिक चेतना का श्रय होना शुरू हो गया । अंततः कालांतर में जनजातियों की राजनीतिक चेतना लुप्त प्राय हो गयी। कुछ जनजाति वर्ग अपराध की तरफ भी प्रवृत्त हुआ जिससे अन्य समुदायों में इनकी प्रतिष्ठा गिर गयी और इनको हेय दृष्टि से देखा जाने लगा।

अंग्रेजों के समय में अंग्रेजों और राजे–रजवाड़ों ने जनजातियों पर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिए। जनजातियों का बड़े पैमाने पर शोषण होने लगा और उनके ऊपर कर लाद दिये गए । जल, जंगल और जमीन पर उनकी दावेदरी को स्वीकार नहीं किया गयां अतः 1818–1860 ईस्वी में भील विद्रोह तथा 1851 से 1860 ईस्वी में मीणा विद्रोह हुए, लेकिन विद्रोहों का दमन कर दिया गया।

जनजाति समुदाय का यही शोषण और अत्याचार उनकी राजनीतिक चेतना के पुनर्जन्म के संवाहक सिद्ध हुए। अपनी गरिमा पर चोट पड़ते देखकर जनजाति समुदाय प्रतिरोध करने पर विवश हुआ ।

यह प्रतिरोध छापामार युद्व या सशस्त्र क्रांति ना होकर सभा, जुलूस, बैठक भाषण इत्यादि गतिविधियों पर आधारित था । जिनमें भाग लेने पर विचारोतेजक होकर राजनीति चेतना का अभ्युदय अवश्यभावी था । राजनीतिक चेतना सामाजिक, नैतिक चेतना लेकर भी आयी। जनजातियों के बड़े वर्ग ने अपराध कर्मों को तिलांजलि दे दी। कई दस्युओं ने आत्मसमर्पण कर दिया । अपराध, लूट–पाट, चोरी इत्यादि को सामाजिक, नैतिक समर्थन मिलना बंद हो गया । नैतिक अधिगमन से जनजाति इतर समुदायों में जनजातियों को सामाजिक, राजनीतिक स्वीकार्यता में वृद्धि हुई ।

जनजाति समुदाय के राजनीतिक सामाजिक पुनर्जागरण के प्रथम चरण में उन लोगों ने नेतृत्व प्रदान किया जो जनजाति वर्ग से नहीं थे, लेकिन जनजाति समूह से गहराई से जुड़े थे एवं जनजाति समूह से सहानुभूति रखते थे। जैसे गोविंद गुरू (बंजारा जाति) के नेतृत्व में सम्पसभा (1883) एवं भगत पंथ भीलों का आंदोलन था। मोतीलाल तेजावत (ओसवाल) के नेतृत्व में 1922 में भीलो का एकी आंदोलन तथा जैन मुनि कनक मगन सागर के नेतृत्व में 1944 में मीणा सुधार समिति आंदोलन आदि ।

स्वातंत्रयोत्तर राजस्थान में जनजातीय राजनीतिक चेतना का नेतृत्व लगभग पूर्णरूप से जनजातीय नेताओं द्वारा ही किया गया । संविधान लागू होने के बाद जनजातीय समुदाय हर प्रकार से दूसरे समुदायों के समान है। जनजातीय समुदाय का शोषण करने वाले कर, बेगार, लालबाग, जरायमपेशा कानून समाप्त हो चुका है ।

पर अब भी अन्य समुदायों के मुकाबले जनजातीय समुदाय पीछे था। संविधान के अनुसार लोकसभा और राज्य विधानसभा में जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित किए गए । लोकसभा में 3 तथा राज्य विधानसभा में 25 सीटे इनके लिए सुरक्षित है। सरकारी सेवाओं में इन्हें नियमानुसार आरक्षण मिला हुआ है। अपने स्वयं के समुदाय के व्यक्तियों के लोकसभा, विधानसभा, पंचायती राज के विभिन्न स्तरों पर पहुंचने से अनुसूचित जनजातियों के प्रभाव में वृद्धि हुई है तथा राजनीतिक विमर्श में आशातीत वृद्वि हुई है। जनजाति समुदाय भी राजनीतिक मुख्यधारा की एक प्रबल ताकत बन गया है।

लेकिन इस चेतना में विषमता भी है। अनुसूचित जनजातियों के आरक्षण का लाभ मीणा जनजाति के अलावा अन्य जनजातियों तक अत्यल्प मात्र में ही पहुंचा है। जिसके चलते उनका शैक्षिक एवं आर्थिक उन्नयन वांछित स्तर तक नहीं हो पाया तथा राजनीतिक चेतना, वांछित स्तर तक नहीं पहुंच पायी है। कंजर, डामोर, सहरिया, गरासिया, सांसी इत्यादि में राजनीतिक चेतना का स्तर अत्यल्प है।

अतः अंत में सार रूप से हम कह सकते है कि राजस्थान की जनजातियों विशेषकर मीणा एवं भील में राजनीतिक चेतना का आशातीत विकास हुआ है। लेकिन धीरे–धीरे अन्य जनजातियों में भी राजनीतिक चेतना का स्तर बढ़ रहा है। अत्यंत छोटे जनजाति समुदाय धानका ने भी राजनीतिक स्तर पर अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है। अलग भील राज्य की अवधारणा तथा भारतीय ट्राइब्स पार्टी के उदय के साथ दक्षिण राजस्थान में भील भी नयी राजनीतिक सर्जना की आहट दे रहे है। जिन जनजातियों का राजनीतिक चेतना स्तर कम है उनका भी शैक्षिक एवं आर्थिक उन्नयन करना आवश्यक है। यह हमारे देश की संवैधानिक और नैतिक जिम्मेदारी भी है ।

– डॉ. अनुपम चतुर्वेदी, सहायक आचार्य
राजकीय बांगड़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
पाली (राजस्थान)
मोबा. 9649888899

संदर्भ :

01. मेरियम वेबस्टर डिक्शनरी, मास मार्केट एडीशन, 2016
02. शर्मा बह्मदेव, आदिवासी विकास एवं सैद्वान्तिक विवेचन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
03. पांडे डॉ. गया एवं उपाध्याय विजयशंकर, जनजातीय विकास, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
04. शर्मा बृजकिशोर, राजस्थान में किसान एवं आदिवासी आंदोलन, राजस्थानी हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
05. व्यास, रामप्रसाद, आधुनिक राजस्थान का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
06. सक्सेना के एस, राजस्थान में राजनीतिक जनजागरण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
07. भारत का संविधान, कानून प्रकाशन, जोधपुर 2019
08. सुजस संचय, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान जयपुर।
09. गुप्ता एम एल एवं शर्मा डी.डी., सामाजिक मानवशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।

वर्तमान में आंबेडकर दर्शन की प्रासंगिकता

– डॉ. नेत्रा रावणकर (प्राचार्य)

सारांश :

भारतीय समाज के साथ–साथ सम्पूर्ण विश्व में जहाँ कही भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर जी का दृष्टिकोण और जीवन संघर्ष एक उज्जवल पथ प्रशस्त करता है। डॉ. अम्बेडकर समानतावादी लोकतंत्र के प्रबल समर्थक थे, उनका मानना था कि सभी को समान प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिए। डॉ. अम्बेडकर के अहिंसा, सामाजिक समानता, सामाजिक न्याय, राजनीतिक समानता आदि विचारों से बौध्द दर्शन की झलक मिलती है। जहाँ यह दर्शन मनुष्य को सत्य मानते है। उसी प्रकार अंबेडकर भी सामाजिक न्याय और सामाजिक समानता को सर्वोपरि मानते है।

बीज शब्द : दर्शन, प्रासंगिकता

दर्शन शब्द संस्कृत 'दृश्य' धातु में बना है। ''दृश्यते यथार्थ तत्वमनेन'' अर्थात जिसके द्वारा यथार्थ तत्व की अनुभूति हो वही दर्शन है। भारतीय अवधारणा के अनुसार दर्शन का क्षेत्र केवल ज्ञान तक सीमित न रहकर समग्र व्यक्तित्व को अपने आप में समा लेता है। दर्शन केवल चिंतन का विषय न होकर अनुभूति का विषय माना जाता है। दर्शन द्वारा केवल आत्म–ज्ञान ही न होकर आत्मानुभूति हो जाती है।

डॉ. अम्बेडकर का विश्वास था कि जीवन के लिए धर्म आवश्यक है और इसके बिना समाज संचालन कठिन है। उनका कहना था, आदमी केवल रोटी पर ही जीवित नहीं रह सकता। उसको मस्तिष्क भी मिला हुआ है जिसे विचारों की खुराक चाहिए।

उन्होंने धर्म का संबंध मानव के सामाजिक प्राणी होने से जोडा है । उनके अनुसार "जिस धर्म में अपने ही अनुयायियों के बीच भेदभाव है, वह धर्म नहीं पक्षपात है,

जो धर्म अपने करोड़ो अनुयायियों को कुत्तों और अपराधियों से बदतर मानता और उन पर नारकीय मुसीबतें बरसाता है वह धर्म हो ही नहीं सकता।

सन् 1935 की येवला कान्फरेन्स में उन्होंने धर्मांतरण की घोषणा की थी। स्वयं के बारे में उन्होंने कहा था कि 'मैं हिन्दू धर्म में पैदा हो गया यह मेरा दुर्भाग्य है किंतु में हिंदू रहकर मरूँगा नहीं। करोडों बहुजन समाज की जनता को अज्ञान, दारिद्रय, रूढी के अंधकार में धकेलने वाला, असंख्य स्त्रियों की मानवता नकारनेवाला धर्म न होकर गुलामगिरी की श्रृंखलाएं है। वे किसी एक ऐसे धर्म को स्वीकार करना चाहते थे जो भारतीय हो जिसमे वर्णभेद तथा छुआछूत न हो, अन्धविश्वास तथा पाखण्ड न हो, मानव केंद्रित तथा बुद्धि पर आधारित हो उसमें स्वतंत्रता, समानता तथा भातृत्व भी हो। ये सभी विशेषताएँ व मूल्य केवल बौद्ध धर्म में ही परिलक्षित हुए इसीलिए उन्होंने बौद्ध धर्म को सहर्ष स्वीकार किया। उन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों में उसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए कहा– मैं बौद्ध धर्म को पसन्द करता हूँ क्योंकि उसमे तीन सिद्धान्तों का समन्वित रूप मिलता है जो किसी अन्य धर्म में नहीं मिलता। बौद्ध धर्म प्रज्ञा, करुणा और प्रेम की शिक्षा देता है। मनुष्य इन्हीं बातों को एक शुभ आनन्दित जीवन के लिए चाहता है। उनका धर्म परिवर्तन आत्माभिमान तथा आत्मसम्मान, समता एवं बंधुत्व के लिए था। उन्होंने जितना संघर्ष, सम्मान तथा मानवीय अधिकारों के लिए किया उतना किसी अन्य बात के लिए नहीं किया। उनके अनुसार सम्मानपूर्वक जीना मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है और इसके लिए यथा संभव त्याग करना चाहिए।

आंबेडकर दर्शन पूर्णतया बौद्ध दर्शन पर आधारित है। बौद्ध दर्शन के अनुसार जीवन में दुःख है और शिक्षा इन दुःखों को दूर करने का मार्ग बतलाती है। बौद्ध दर्शन के आधार चार आर्य सत्य है, यथा – जीवन दुःखों से परिपूर्ण है, दुःखों का कारण है, दुःखों का अंत संभव है तथा दुःखों के अन्त का उपाय है।

दुःख का कारण अज्ञान है। शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति को अज्ञान से मुक्त करना है। हजारों वर्ष पूर्व बुद्ध ने 'सर्व क्षणिकम सर्व दुःख' बताया है। आज वर्तमान समय में भगवान बुद्ध का प्रज्ञा, शील, करुणा पर आधारित बौद्ध धर्म का ज्ञान ही मानवी जीवन को दुःखमुक्ति का मार्ग प्रदर्शित कर सकता है।

डॉ. आंबेडकर का प्रमुख घोषवाक्य था 'शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो।' 'अप्पो दीपो भव' अपना दीपक आप बनो। दलितो की मुक्ति का उत्तम मार्ग उच्च शिक्षा, उच्च रोजगार और जीविका कमाने के उत्तम ढंगों मे निहित है ऐसा वे मानते थे। उन्होंने समाज कल्याण हेतु धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्तर पर जीवन पर्यंत संघर्ष किया।

आंबेडकरवाद और मानव सह–अस्तित्व के संदर्भ में गहराई से विचार करने पर हमें महसूस होता है कि आज एक ओर विज्ञान की भौतिकवादी धारा ने मनुष्य को अस्तित्वहीन बना दिया है तो दूसरी ओर तथाकथित लोकतंत्रात्मक एवं समाजवादी समाज में व्यक्ति का अस्तित्व निःशेष हो गया है। अस्तित्व का विचार करने पर सर्वप्रथम मनुष्य क्या है, ईश्वर क्या है। विश्व क्या है? ज्ञान, सत्य, सौंदर्य, शुभ–अशुभ आदि क्या है इन प्रश्नों की ओर हम मुखातिब होते हैं। दार्शनिक किर्केगार्ड का प्रसिद्ध उद्धरण 'मैं सोचता हूँ, इसलिए मेरा अस्तित्व है। मनुष्य की स्वतंत्रता संपूर्ण है। किर्केगार्ड के अनुसार मनुष्य का सार तत्व यह है कि वह स्वतंत्र है, वह सृजन कर सकता है, चयन कर सकता है। मनुष्य अपनी नियति का स्वयं नियन्ता तथा नियामक है। वह स्वयं मूल्यों का निर्माता तथा व्याख्याता है।

डॉ. आम्बेडकर के प्रयासों से भारत में सार्थक सामाजिक परिवर्तन और प्रगति हुई है। डॉ. आम्बेडकर ऐसे समाज के निर्माण पर जोर दिया जो समानता पर आधारित हो, जो जाति के आधार पर नहीं। समाज, धर्म और राज्य का उद्देश्य व्यक्ति को विकास के क्रम स्वतन्त्रता का अवसर प्रदान करना है न कि वर्ण एवं

जाति के नाम पर उसकी स्वतन्त्रता पर प्रहार करना। राजनैतिक और आर्थिक क्रांति के लिये सामाजिक क्रांति जरूरी है। यह उनका मानना था। समाज में व्यक्ति को विचार एवं अभिव्यक्ति, शारीरिक, रक्षा, पेशे का चुनाव, शिक्षा प्राप्त करना मतदान करना, चुनाव में खड़े होना, किसी भी धर्म को स्वीकार करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये।

वर्तमान परिवेश में जहाँ उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की धारणाएं प्रबल हो रही है तथा जीवन के हर क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा एवं प्रतियोगिता का महत्व बढ़ रहा है वहाँ जाति नहीं बल्कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता ही सामाजिक संरचना को दृढ़ता प्रदान कर सकती है।

डॉ. आम्बेडकर का मानववादी चिन्तन वास्तव में एक ऐसे नये समाज के निर्माण की ओर उन्मुख था जो उन नष्ट मूल्यों और नये मानवीय संबंधों पर आधारित हो। जिन्हें आदमी ने आदमी के लिये सृजित किया है। उनका मानवतावादी चिंतन वर्णाश्रम धर्म व कर्म पर आधारित समान व्यवस्था का विरोधी था। डॉ. आम्बेडकर के सामाजिक विचारों को जानने के लिये उनके द्वारा स्थापित और संशोधित सिद्धान्तों को जान लेना जरूरी है चिन्तन के स्तर पर सामाजिक पुर्नरचना संबंधी विचारों को स्पष्ट करना उन्हें सिद्ध करना और उसी समय उन विचारों के आधार पर सामाजिक आंदोलनों की मोर्चेबंदी करना यह डॉ. आम्बेडकर के समाजसुधारक व्यक्तित्व की विशेषता थी। उनके सामाजिक विचारों का केन्द्र बिन्दु मनुष्य है। वे किसी विशिष्ट जाति या वर्ण के विरोध में नहीं थे। वे एक ऐसी समाज व्यवस्था के लिये प्रयत्नशील थे जहाँ मनुष्य–मनुष्य के प्रति आदर रखता हो प्रेम, बंधुता, मानवीयता से जुड़े मनुष्य को न्याय दिलाने के लिये संघर्षरत् थे। ठीक इसी समय इतिहास के गम्भीर अध्ययन से समतावादी समाज रचना के लिये आवश्यक दर्शन और चिंतन की अभिव्यक्ति भी वे कर रहे थे।

सामाजिक एवं धार्मिक निर्योग्यताओं के कारण प्राचीन काल से ही दलितों को सामाजिक क्रियाकलापों में भाग लेने की स्वतंत्रता नहीं थी। जिसके परिणामस्वरूप उनमें शोषण के प्रति मूक रहने की प्रकृति का विकास हुआ। लेकिन वर्तमान में जो महत्वपूर्ण परिणाम आये है जिसके परिणामस्वरूप उनमें एक प्रमुख परिवर्तन है दलितों पर सदियों से लादी गई सामाजिक एवं धार्मिक निर्योग्यताओं की वैधानिक रूप से समाप्ति शहरीकरण, औद्योगिकरण, पश्चिमीकरण, शिक्षा, आधुनिकीकरण एवं राजनीतिकरण जैसे कारणों ने दलित वर्ग के व्यक्तियों को व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से अपने निम्न सामाजिक स्तर पर आर्थिक एवं राजनैतिक पिछड़ेपन के लिये जागृत किया है। उक्त सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों से उनकी जीवन शैली में भी परिवर्तन आया है, जिसका सम्पूर्ण श्रेय डॉ. आम्बेडकर को है।

शिक्षण केन्द्रों, नौकरियों, विधानसभा और लोकसभा में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिये 1952 से आरक्षण लागू करवा लेना डॉ. आम्बेडकर की बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। दलित आदिवासियों और स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा के लिये भी डॉ. आम्बेडकर ने कई कानून बनवाये। उनकी प्रेरणा से अनुसूचित जाति आयोग भी बना ।

बाबासाहेब आम्बेडकर अपने समय की सामाजिक व्यवस्था से अत्यन्त क्षुब्ध थे, क्योंकि वे स्वयं दलित थे और पग–पग पर होने वाला अपमान और तिरस्कार, मनुस्मृति वास्तव में सवर्ण हिन्दुओं के उन्हें झेलना पड़ा था। वे दलितों के प्रणेता स्त्रोत थे आज के दलित साहित्य में उनकी प्रेरणा दिखायी देती है ।

उन्होंने समाज के चारों पहलुओं धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्तर पर जीवनपर्यन्त संघर्ष किया। उनका प्रमुख नारा 'शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो' तथा 'अपना दीपक आप बनों' एक प्रेरणा मन्त्र है।

– डॉ. नेत्रा रावणकर, प्राचार्य
निर्मला कॉलेज ऑफ एजुकेशन उज्जैन (म.प्र.)
मोबा. 94253 79084

संदर्भ :

1) भारतीय दलित साहित्य का विद्रोही स्वर विमल थोरात, सूरज बडल्या रावत पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2008
2) अनुसूचित जातियों के हितों के लिये डॉ. आम्बेडकर की भूमिका – डॉ. तारा परमार पब्लिकेशन स्कीम जयपुर, 1999
3) दलित राजनीति की समस्याएं – संपादक राजकिशोर वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2006
4) अस्पृश्यता एवं दलित चेतना– डॉ. पूरणमल, पोईंटर पब्लिशर्स जयपुर, 1999
5) डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर – डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे राधाकृष्ण प्रकाशन, 1998
6) डॉ. आम्बेडकर का चिंतन एवं पुनर्जागरण की आवश्यकता सं. नागेश्वर राव गोपालकृष्ण शर्मा आम्बेडकर पीठ विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन।
7) दलित साहित्य वेदना और विद्रोह – संपादक शरणकुमार लिम्बाले वाणी प्रकाशन 2010 दिल्ली।

वंचित, उपेक्षित व हाशिए के समुदायों के विकास के मुद्दे और भारतीय मीडिया

– डॉ. आसीन खाँ एवं डॉ. अनिल कुमार यादव

सार–संक्षेप

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है जिसमें भिन्न–भिन्न जाति व संप्रदायों के लोग निवास करते हैं। देश की कुल आबादी में दो–तिहाई से अधिक महिला, दलित, आदिवासी व अल्पसंख्यक–मुसलमान हैं जो राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक रूप से वंचित, उपेक्षित और हाशिए के लोग हैं। स्वाधीनता के बाद सात दशक से अधिक की विकास प्रक्रिया में भारतीय समाज के इन वर्गों को पर्याप्त भागीदारी व हिस्सेदारी नहीं मिली है। जहां एक ओर महिलाओं को पुरुषवादी ढांचे से संघर्ष करना पड़ रहा है तो वहीं दूसरी ओर दलित, आदिवासी एवं मुसलमान उपेक्षित व हाशिए पर हैं और वंचना की पीड़ा झेल रहे हैं। मीडिया का एक वर्ग अपनी परिचर्चाओं में इन वर्गों के लोगों को उनकी प्रतिभा के आधार पर प्रस्तुत न करके वे किस वर्ग या जाति विशेष से संबद्ध हैं, इस बात को खासतौर से रेखांकित करने के प्रयासों में लगा होता है। हमने इस आलेख में भारतीय समाज के इन वर्गों से संबद्ध लोगों के विकास के मुद्दों पर प्रकाश डालते हुए देश की मीडिया के रवैये को उजागर करने का प्रयास किया है।

प्रस्तावनाः

राजनीतिक शब्दावली से इतर दलित शब्द से आशय भारतीय समाज में सामाजिक–सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक रूप से दबी–कुचली जाति व समुदायों से है। ये बहुजन समुदाय के लोग, आर्थिक व सामाजिक विकास की प्रक्रिया से सृजित प्रगति के लाभों से वंचित होने के साथ–साथ उपेक्षित भी हैं। इन वर्गों में गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, भुखमरी, कुपोषण जैसी समस्याएं व्यापक रूप से देखी जा सकती हैं जिनके मूल में राजनीतिक दुर्भावना, नीति निर्माताओं की दोषपूर्ण सोच तथा व्यवस्था तंत्र की उदासीनता है। भारत की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रणाली में मुसलमान, महिलाएं, अनुसूचित जाति व जनजाति के लोग वंचित, उपेक्षित व हाशिए के वर्गों में शामिल हैं। देश में सामाजिक– सांस्कृतिक असमानताएं पीढ़ी दर पीढ़ी चलकर आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण व स्वामित्व के पथ को अपनाते हुए वितरणात्मक असमानता को बनाए हुए हैं जो काफी हद तक आर्थिक विकास एवं मानव कल्याण के समस्त आयामों में वंचित वर्गों के पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी है ।

बहुजन समुदायों के विरुद्ध अत्याचार व हिंसा की रिपोर्टिंग में मीडिया संतुलित दिखाई नहीं पड़ता है। कई बार तो मीडिया का व्यवहार ऐसा लगता है मानों समाज के गरीब, दलित और वंचित तबके उसके सरोकार और उत्तदायित्व से बाहर हैं। पिछले दो दशकों के दौरान कॉर्पोरेट्स को करों में छूट, ऋण–राइट ऑफ, बैल आउट पैकेजों आदि के नाम से अमीरों और उद्योगपतियों को लाखों करोड़ रुपयों की राहत दी गई। तकनीकी शब्दावली में उलझाकर इन सबको अर्थव्यवस्था के विकास के लिए सकारात्मक पहल व दूरदर्शी कदम बताने वाली मीडिया ने किसान कर्जमाफी, कृषि इनपुट्स पर अनुदान, गरीबों को अनाज, सार्वजनिक शिक्षा, स्वास्थ्य, मनरेगा जैसी योजनाओं के खिलाफ बड़ी–बड़ी बहसों के जरिए नकारात्मक माहौल बनाने का काम किया ।

मूल आलेख एवं विमर्शः

जनगणना–2011 के अनुसार देश की 121 करोड़ जनसंख्या में 58.64 करोड़ महिलाएं, 20.14 करोड़ अनुसूचित जाति, 10.42 करोड़ अनुसूचित जनजाति और 17.22 करोड़ मुसलमान आबाद हैं। आर्थिक व सामाजिक विकास के कमजोर सूचकों के साथ देश में उपेक्षित बहुजन जिनमें मुसलमान भी शामिल हैं, राजनीतिक उपेक्षा, सामाजिक–आर्थिक बहिष्कार एवं वंचनाओं का शिकार हैं। धार्मिक एवं जाति आधारित ध्रुवीकरण व हिंसा, घटता राजनीतिक प्रतिनिधित्व, कम होती

आर्थिक सहभागिता और बढ़ती असहिष्णुता जैसे मुद्दे इन वर्गों के लिए चिंता के विषय हैं। भारतीय समाज के इन बहुजनों की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक समस्याओं के समाधान में मीडिया महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है परंतु तथाकथित 'गोदी मीडिया' के विमर्श के मुद्दे इन वर्गों के सरोकारों से संबद्ध नहीं हैं ।

आज के दौर में जो एक बात बहुत सिद्दत से देखने को मिल रही है, वह आर्थिक विषमतायें जिसके कारण लोकतंत्र एक वर्ग विशेष के लिए उपलब्धियों के रूप में सामने आता है तो दूसरे वर्गों के लिए निपट गरीबी व अभावग्रस्तता के रूप में प्रस्तुत हो रहा होता है। जब से भारत ने नव उदारवादी नीतियों को अपनाया है तब से देश में अरबपतियों की संख्या और उनकी संपदा में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि दर्ज की गई है परंतु आबादी के सबसे निचले हिस्से की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ, जिसके परिणामस्वरूप समाज में विषमता की खाई लगातार चौड़ी होती जा रही है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के आंकड़ों के अनुसार 2011–12 के दौरान देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली पांच प्रतिशत सबसे निर्धन और पांच प्रतिशत सबसे अमीर आबादी का प्रतिव्यक्ति मासिक औसत खर्च क्रमशः 521.44 एवं 4481 रुपये था। वहीं दूसरी ओर पांच प्रतिशत सबसे निर्धन तथा पांच प्रतिशत सबसे अमीर शहरी आबादी का प्रतिव्यक्ति औसत मासिक खर्च क्रमशः 750 व 10282 रुपये था। सामाजिक असमानता व भेदभाव, आर्थिक विषमता के माध्यम से वंचनाओं को जन्म देते हैं, जिसकी परिणति उपेक्षा व हाशिएकरण के रूप में सामने आती है। इसलिए आर्थिक व सामाजिक विकास का प्रतिरूप समावेशी तथा पथ सहभागी होना चाहिए। अमेरिकी न्यायाविद लुई डी ब्रैंडे का कहना है कि किसी देश में लोकतंत्र हो सकता है या फिर बहुत थोड़े से लोगों के पास शक्ति एवं संपदा का संकेंद्रण। किसी भी प्रकार की विषमतायें विशेष रूप से आर्थिक विषमता और लोकतंत्र का एक साथ बने रहना असंभव है क्योंकि विषमता धीरे–धीरे लोकतंत्र को नष्ट कर देती है अथवा उसे दोषपूर्ण बना देती है।

आज भारत में मुख्यधारा की मीडिया का एक बड़ा वर्ग, जिसे कुछ पत्रकार, बुद्धिजीवी एवं सिविल सोसाइटी के लोग 'गोदी मीडिया' कहते हैं, वह हिंदू – मुस्लिम एजेंडे पर कार्य करते हुए सांप्रदायिक व गैर–जरूरी बहसों के माध्यम से कॉर्पोरेट्स एवं सरकार के पक्ष में माहौल बनाने के प्रयासों में लगा हुआ है और बड़ी ही चालाकी से आम आदमी की समस्याओं और उनके विकास से जुड़े मुद्दों को गायब कर देता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, महंगाई, और जनसामान्य की समस्याओं से जुड़े हुए या सरोकार रखने वाले मुद्दों को बहसों का हिस्सा ही नहीं बनने दिया जा रहा है और जब कभी प्रयास किये गये तो उनको राष्ट्रविरोधी, विदेशी ताकतों के इशारों पर काम करने वाले, अलगाववादी, शहरी नक्सली जैसे अलंकारों से नवाज दिया गया। मुख्यधारा की मीडिया का एक वर्ग देश के वंचित, उपेक्षित व हाशिए के वर्गों से संबंधित महत्वपूर्ण मुद्दों पर विमर्श तक नहीं चाहता है, इसके उलट उनके समक्ष चैनलों के 'स्टुडियोज में सृजित' कृत्रिम व गैर–जरूरी मुद्दों को लाकर खड़ा किया जाने लगा है।

कोविड–19 महामारी के दौरान तबलीगी जमात के बहाने और वर्ष 2022 में, देश भर में सांप्रदायिकता का अभूतपूर्व उन्माद देखने को मिला। इन उपद्रवों में और बाद में, पुलिस–प्रशासन का एक पक्षीय व्यवहार एवं कार्यप्रणाली, गोदी मीडिया की सांप्रदायिक रिपोर्टिंग और न्यायिक संस्थाओं की खामोशी पर सिविल सोसाइटी हैरान और देश का मुसलमान परेशान है। घोषित–अघोषित रूप से शुरू हुए बहिष्कार देश के मुसलमानों के लिए पीड़ादायक हैं। सत्ता व शासन के द्वारा मुसलमानों के सामाजिक व आर्थिक बहिष्कार को एक प्रकार रूप में मध्यप्रदेश के खरगोन हिंदू व मुसलमानों की रिहाइसों के बीच कंक्रीट की पक्की दीवारें खड़ी कर देना बेहद चौंकाने वाली घटना है। यह न केवल अलोकतांत्रिक है बल्कि संविधान का खुलेआम उल्लंघन है।

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश से संबद्ध डॉ. तारा परमार के आह्वान पर नवंबर 13–16, 2022 को उज्जैन से शुरू करके डॉ. भीमराव अंबेडकर की जन्म स्थली – महू तक चार दिवसीय संविधान बचाओ पदयात्रा को मीडिया ने यथोचित कवरेज नहीं दिया। यात्रा के आमंत्रण पत्र पर ''संविधान बचेगा, देश बचेगा", "निकलो बाहर मकानों से, जंग लड़ो बेईमानो से' और ''संविधान की रक्षा कौन करेगा, हम करेंगे, हम करेंगे" जैसे भावपूर्ण स्लोगन डॉ. परमार तथा डीएआरवाईएस जैसे संगठनों की संविधान को लेकर गंभीर चिंताओं को उद्घाटित करते हैं। आमंत्रण पत्र पर प्रकाशित वाक्य 'आज देशभर में अल्पसंख्यक–मुसलमानों पर हमले हो रहे हैं, आने वाले कल में अनुसूचित जाति और जनजाति पर होने वाले हैं, इसलिए बाबा साहब डॉ. अंबेडकर द्वारा लिखित संविधान और उसकी मूल भावना को बचाए रखने के लिए बहुजन समाज के लोगों से अपने घरों से निकल पड़ने का आह्वान, आयोजकों की आसन्न चिंताओं को प्रकट करने के साथ–साथ समग्र दूरदृष्टि का परिचायक है। परंतु मीडिया

बहुजन समाज के सरोकारों की अपेक्षा राजनीतिक कार्यक्रमों को कहीं अधिक महत्त्व देता है।

यह सही है कि आज भी भारतीय मीडिया में पत्रकारों का एक वर्ग निर्भीक होकर निष्पक्ष पत्रकारिता को जिंदा रखे हुए है, खास तौर से वंचित, अल्पसंख्यक–मुसलमान व दलितों के मुद्दों को लेकर। इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि मुसलमानों व दलितों के विरुद्ध संगठित हिंसा व उत्पीड़न के बहुत सारे मामले निष्पक्ष और निर्भीक पत्रकारों के प्रयासों से ही राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय पटल पर चर्चा के मुख्य बिंदु बन सके। परंतु यह भी उतना ही सच है कि बहुजन समाज के चिंतनशील लोगों और उनके संगठनों की सक्रियता तथा संवैधानिक संस्थाओं की सजगता से संविधान का मूल ढांचा बचा हुआ है वरना बहुत से अतिवादी इसे बदलने की जुगत में लगे हैं और मीडिया का एक वर्ग उनके कुत्सित प्रयासों को चर्चा केंद्र में लाकर सहयोगी की भूमिका में लगा है।

अंत में हम अपनी बात को इस वाक्य के साथ खत्म करना चाहेंगे कि 'आज पत्रकार राजनीति में सक्रिय हैं, राजनेता पत्रकार बन गये हैं और उद्योगपति मीडिया समूह चला रहे हैं ऐसे में पता ही नहीं लगता कि कौन पत्रकार है और कौन राजनीति में है।' यह आज के दौर की मीडिया के चरित्र का वास्तविक चित्रण है ।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

किसी राष्ट्र का समन्वित व समावेशी विकास तभी संभव है जब आर्थिक संवृद्धि के लाभों का वितरण और आर्थिक ढांचागत परिवर्तन जनसामान्य के जीवन स्तर को ऊपर उठाने में सहायक हों। स्पष्ट रूप से समाज के निचले तबकों, वंचित व उपेक्षित वर्ग के लोगों की स्थिति में सुधार, उत्पादन के तौर–तरीकों में परिवर्तन, शिक्षा के स्तर में सुधार, कौशलयुक्त श्रम शक्ति, जीवन मूल्यों की संकीर्णता से मुक्ति और प्रतिनिधित्व के साथ–साथ सहभागी लोकतांत्रिक व्यवस्था समावेशी आर्थिक विकास की अनिवार्यताएं हैं। बाबा साहब डॉ. अंबेडकर ने लोकतंत्र के ऐसे स्वरूप की आवश्यकता पर बल दिया था जिसमें स्वतंत्रता, समानता, धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक न्याय के मूल्यों को संस्थागत रूप मिला हो। स्पष्ट है कि लोकतांत्रिक समावेशन तभी संभव है जब राज्य और समाज का ढांचा उपेक्षित एवं वंचित वर्ग के सशक्तिकरण और उनके आपसी संबंधों को गैर–श्रेणीबद्ध व समान रूप से पुनर्गठित करने के उद्देश्य से सत्ता एवं शक्ति संरचना में मौलिक परिवर्तनों पर आधारित हो और मीडिया इसमें सकारात्मक भूमिका निभाए।

मीडिया को लोकतंत्र का एक मजबूत स्तंभ माना जाता है परंतु यदि वह अपने लोकतांत्रिक दायित्वों से विमुख होकर, शासन व सत्ता की समर्थक संस्था के रूप में काम करने लगे तो फिर मीडिया सशक्त लोकतंत्र की स्थापना और उसके समावेशीकरण पर आघात करने वाला संस्थान बन जाएगाय जो अपने व्यावसायिक दायित्वों से भी परे लाभ हितकारी संस्था के रूप में काम करते हुए बहुजन समाज की बजाय कॉर्पोरेट्स, औद्योगिक घरानों व अमीरों के पक्ष में खड़ा मिलेगा। चिंता इस बात की है कि लोकतंत्र के एक सजग प्रहरी के रूप में मीडिया की स्थापित छवि के उलट यह स्थिति शेष लोकतांत्रिक संस्थाओं को भी कमजोर बना सकती है। इसलिए आज जरूरत इस बात की है कि वह निष्पक्ष होकर, हमारे समाज के इन कमजोर, गरीब और दबे–कुचले समुदायों के विकास के मुद्दों को मुख्य चर्चा में शामिल करके, संवेदनशीलता से अपनी जिम्मेदारी निभाए ।

(1). डॉ. आसीन खाँ,
एसोशिएट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर।
मोबा. 94606 01973
(2). डॉ. अनिल कुमार यादव
एसोशिएट प्रोफेसर – अर्थशास्त्र
आयुक्तालय, कॉलेज शिक्षा, जयपुर राजस्थान ।

संदर्भ :

1. द्रेज, ज्यां एवं अमर्त्य सेन. (2012), 'विकास का उचित स्थान', योजना, 56(3), प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली. पृ. 45–49.
2. चमड़िया, अनिल. (2012), 'महादलित की विकास गाथा' योजना, 56(8), पृ. 39–40.
3. यायावर, भारत. (2013), 'गांधी होने का अर्थ', योजना, 58(10), पृ. 58–59.
4. सारस्वत, ऋतु. (2015), 'अंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता', कुरुक्षेत्र, 62(2), प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली. पृ. 15–17.
5. राय, उमेश कुमार एवं रेखा अजवानी. (2016), 'मीडिया, अर्थ – जगत और सिकुड़ता जन–संस्कार', मीडिया : अतीत, वर्तमान एवं भविष्य (सं.), श्री नटराज प्रकाशन नई दिल्ली. पृ. 112–21.
6. राय, उमेश कुमार एवं रेखा अजवानी. (2016), 'मीडिया : बढ़ती जिम्मेदारियां और गिरते मूल्य', उपरोक्त, पृ. 19–24.
7. खाँ, आसीन. (2022), 'भारत में वंचित वर्गों का विकास और समावेशी लोकतंत्र मुद्दे एवं चुनौतियां', आश्वस्त, 25(227), भारती दलित साहित्य अकादमी,उज्जैन. पृ. 4–7.
8. https://carnegieendowment-org/2020/08/18/mounting-majoritarianism-and-political-polarization-in-india-pub-82434
9 https://www-bhaskar-com/local/mp/bhopal/news/shops-stopped-after-the-riots-he-was-fired-for-being-a-muslim-129946150-html

* शिक्षा एक दुधारी तलवार की तरह है। जो व्यक्ति चरित्रहीन और विनय रहित है, वह शिक्षित होते हुए भी एक पशु से अधिक भयावह है।
* समय की मांग है एक विचारशील और बुद्धि निष्ठ समाज रचना।
* राजनीति से अलिप्त रहने में भी विद्यार्थियों की पढ़ाइ का नुकसान हो रहा है। उनकी शिक्षा का स्तर नीचे गिर रहा है।
* कोई भी समाज शिक्षा के क्षेत्र में कितना आगे जाता है इस पर ही उस समाज की प्रगति का मूल्यांकन किया जाता है।
* मेरे विद्यार्थियों ! तुम विनम्र अवश्य बनो, लेकिन अन्याय के आगे कभी मत झुको।
* शिक्षा पर किसी वर्ग विशेष का अधिकार नहीं है। अस्पृश्यों को विद्या अध्ययन करके अपने ऊपर लगा कलंक मिटा देना चाहिए।
* केवल उसी दशा में हम अपना उत्थान कर सकते हैं, जब हम अपनी सुरक्षा स्वयं करना सीखे। अपने सम्मान को पुनः प्राप्त करें और असीम ज्ञान प्राप्त करें।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

आश्वस्त

शिक्षा शेरनी का दूध है।
जो पियेगा वह दहाड़ेगा॥

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

पंजीयन संख्या
RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में ,

_____

_____

_____

_____

पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक पिंकी सत्यप्रेमी ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स, 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734-4000030 से मुदित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734-2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार

जुलाई 2023